Journal of Advances in Developmental Research (IJAIDR)

E-ISSN: 0976-4844 ● Website: www.ijaidr.com ● Email: editor@ijaidr.com

शोध आलेख

''कबीर के 'सबद' में व्यंग्य का स्वरूप''

डॉ. द्वारिका प्रसाद चन्द्रवंशी

सहा. प्राध्या. हिन्दी

अटल बिहारी वाजपेयी शास. महा. पाण्डातराई, जिला–कबीरधाम (छ.ग.)

सारांश :–

एक महान क्रांतदर्शी एवं वाणी के तानाशाह के रूप में विख्यात मध्यकालीन निर्गुम भक्ति धारा के प्रवर्तक स्वनाम धन्य कवि कबीरदास अपने व्यंगयात्मक तेवरों से ज्यादा प्रसिद्ध हुए हैं। वे बिना लाग लपेट के बात करने वाले एवं सीधे न समझने वालों के लिए व्यंग्यात्मक तेवर अपनाने वाले संत रहे हैं। उनकी वाणी संग्रह साखी, सबद और रमैनी के रूप में प्रसिद्ध हैं। उन्होंने तीनों में यत्र–तत्र व्यंग्य का प्रयोग किया है। उनका व्यंग्य किसी को दुख देने के लिए नहीं वरन सत्य की प्रतिष्ठा के लिए एवं ज्ञान चक्षु को खोलने के लिए होते हैं। प्रस्तुत आलेख में कबीरदास जी द्वारा उनके वाणी संग्रह 'सबद' में जो व्यंग्य के स्वरूप दिखाई देते हैं उन्हीं पर संक्षेप में प्रकाश डाला गया है।

मुख्य शब्द :– आतम, बाभन, तुरूक, खतना, बाट, चिकनिया, डिगंबर, जंगम, मिसिर, तसबी, कसबी

प्रस्तावना :– मध्ययुगीन निर्गुण भक्तिधारा के ज्ञान मार्ग के प्रणेता संत शिरोमणी कबीर दास की वाणी का संग्रह साखी, सबद और रमैनी शीर्षक से किया गया है। फक्कड़ एवं मस्तमौला कवि ने अपनी बात को जन सामान्य तक प्रेषित करने के लिए व्यंग्य का अच्छा सहारा लिया है। उनके 'सबद' में 'साखी' से भी तीखा व्यंग्य है। 'सबद' में कबीर दास जी ने जीवन की क्षण–भंगुरता तथा संसार की असत्यता, नश्वरता एवं असारता को इससे अनभिज्ञ जन सामान्य तक पहुँचाना चाहते है। इस संदर्भ में जयदेव सिंह एवं वासुदेव सिंह लिखते है – ''उन्होंने आम आदमी को यथार्थ–बोध कराने के लिए सामाजिक रूढ़ियों तथा बाह्याचारों एवं बाह्यडंबरों पर तीखा व्यंग्य किया है।''[1] उनका निर्मल मन समाज में व्याप्त मिथ्याचार को देखकर विद्रोह कर उठा था। 'सबद' में उनकी आत्मा की वह तड़प स्पष्ट दिखाई पड़ती है। श्रीमती प्रतिभा सिंह लिखती हैं – ''ये व्यंग्य कबीर के यथार्थ–बोध और उनके लक्ष्य को वास्तविक रूप में उजागर करते हैं। उनका यह लक्ष्य और कुछ नहीं, केवल व्यंग्य के माध्यम से सामाजिक, धार्मिक, नैतिक और सांस्कृतिक कुहासे को साफ़ कर वास्तविक चित्रों को उभारता है।''[2]

उद्देश्य :– प्रस्तुत शोध आलेख में फक्कड़ एवं मस्त मौला संत कवि कबीरदास जी के वाणी संग्रह 'सबद' में निहित व्यंग्य के स्वरूपों पर संक्षेप में प्रकाश डालने का प्रयास किया गया है। जिसमें पाठकों का ध्यान अन्य तत्वों के अतिरिक्त इसके अध्ययन में व्यंग्य की ओर भी अग्रसित हो सके।

कबीर दास जी ने 'सबद' में व्यक्ति और समाज व्यवस्था पर भी गहरा व्यंग्य किया है। परदुःख कातरता से हीन व्यक्ति एवं समाज की गर्हित परंपराओं पर उन्होंने अचूक व्यंग्य बाण से प्रहार किया है। उन्हें ऐसी व्यवस्था, जो मनुष्य–मनुष्य से भेद सिखाएय ईश्वर को मंदिर–मस्जिद और गिरजा–घरों में कैद करके रखेय मानव को तुर्क–हिन्दूय ब्राह्मण–शुद्र में विभक्त करेय स्पृश्य–अस्पृश्य की भावना पैदा करेय व्यक्ति–व्यक्ति के मन में हिंसा–द्वेष

भड़कावेय कैसे स्वीकार हो सकती है? इसलिए जिस पर कबीर की पैनी दृष्टि पड़ी, उस पर उन्होंने तीखा व्यंग्य प्रहार कर उसका भण्डाफोड़ किया।''[3]

कबीर दास जी ने अपने 'सबद' में सामाजिक असमानताओं एवं कुप्रथाओं का प्रबल विरोध किया है। इसमें उनके आडंबरों एवं बाह्मचारों पर प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष व्यंग्य खण्डनात्मक भी है और सर्जनात्मक भी। इस संदर्भ में डॉ. रामचन्द्र तिवारी का मत है– ''कबीर दास ने जहां कहीं ढोंग, दिखावा, कपट, धोखा, फरेब, आडंबर, स्वाँग, प्रपंच, छल–छद्म देखा, वहीं निर्मम होकर प्रहार किया। पण्डित हो चाहे मौलवी, गुरू हो या वीर, योगी हो फकीर, हिन्दू हो या मुसलमान, यदि वह सच्चाई के मार्ग से अलग है, तो कबीर ने उसे चेतावनी दी है, टोका है, खिल्ली उड़ाई है, व्यंग्य और उपहास किया है।''[4]

परमब्रह्म की सर्वत्रता की बात करते हुए हिन्दुओं के पूजा–विधान पर व्यंग्य करते हुए वे उसका खण्डन–मण्डन भी करते है–

कौन विचार करते हौं पूजा।
आतम राम अवर नहिं दूजा।।

वे मुसलमानों की एक खुदाई की बात पर व्यंग्य करते हुए उसे घर–घर में स्थित मानते हैं–

मुसलमान कहै एक ख़ुदाई।
कबीर कौ स्वामी घटि–घटि रहौ समाई।।

उन्होंने कामिनी नारी की 'माया' कहकर निंदा करते हुए उन पर व्यंग्य–बाणों से प्रहार किया है। वे ब्राह्मणों और तुर्कों की दुर्भावनाओं पर एक साथ व्यंग्य–बाण छोड़ते हैं–

जे तूं बाभन बभनी जाया।
तौ आन बाट होई काहे न आया।।
जे तूं तुरूक तुरूकिनी जाया।
तौ भीतरि खतनां क्यू न कराया।।

कबीर ने विविध बाह्माचारों पर व्यंग्य करते हुए सम–सामयिक स्थिति का यथार्थ चित्र भी खींचा है। इस यथार्थ चित्रण में व्यंग्य का अप्रत्यक्ष रूप ही दिगदर्शित हुआ है–

यहु माया रघुनाथ की खेलन चढ़ी अहेरे।
चतुर चिकनिया चुनि–चुनि मारे कोई न छाँड़ा नैरे।।
मौनी बीर डिगंबर मारे जतन करंता जोगी।
जंगल मांहि के जंगम मारे माया किनहु न भोगी।।
वेद पढ़ंता ब्राह्मन मारा सेवा करंता स्वामी।
अरथ करंता मिसिर पछाड़ा भल महि घालि लागांमी।
साकत कैं तू हरता करता हरि भगवान कै चेरी।
दास कबीर राम कै सरनैं ज्यों आई त्यों फेरी।।

''कबीर दास जी ने समाज गर्हित क्रियाओं के लिए शैवों, शाक्तों एवं योगियों की भी आलोचना की है। ''क्या जपु क्या तपु क्या व्रत पूजा। जाके हृदय भाव है दूजा।।'' कहकर वे जप–तप , योग जैसे बाह्य साधनाओं को अंगीकार नहीं करते। बाह्याडंबर की निरर्थकता को कबीर दास जी ने इस पंक्तियों में स्पष्ट किया है –

मूँड़ मूड़ाए जौ सिधि होई। सरगहि भेंड न पहुँची कोई।
क्या ऊजू जपमन्जन किए, क्या कसौति सिरू नाएँ।
दिल महि कपट निवाज गुजारै, क्या हज काबै जाएँ।।''[5]

कबीर दास जी के हृदय में सामाजिक कुरीतियों एवं आडंबरो पर चिन्ता ज्यादा थी उससे भी ज्यादा छटपटाहट उन्हें मानने वाले लोगों को लेकर थी, कि कैसे लोग इन आडंबरों के जाल में फँसकर सीधे साधे जीवन

को उलझा डाले हैं, कैसे–कैसे कष्ट सह रहे हैं, कैसे मानवता का गला सरेआम घोंटा जा रहा है और लोग बिना विरोध किये देख रहे हैं।

कबीर मानवतावादी कवि है। उन्होंने सामाजिक बुराइयों एवं विकृतियों का सर्वत्र विरोध किया। उनके व्यंग्य ने सामाजिक के साथ–साथ भौतिकता और आध्यात्मिकता की विसंगतियों को भी उजागर किया। उनका यह विरोध आक्रामक है, जिसका अस्त्र है–व्यंग्य। व्यंग्य ही भौतिकता और आध्यात्मिकता की जड़ में प्रवेश कर उसकी वास्तविकता की कलई खोलता है।

कबीर दास जी ने वर्ण–व्यवस्था तथा हिन्दू और मुसलमान कुल में जन्म लेने पर व्यंग्य करते हुए कहा है –

'जौ पै करता बरन बिचारे।
तौ जन तैं तीन डाँडि कि सारै।।'

अर्थात् यदि ईश्वर को वर्ण– व्यवस्था अभीष्ट होता तो ब्राह्मणों की ललाट पर तीन रेखाएँ बनाकर ही उन्हें उत्पन्न करता।

डॉ. कांति कुमार जैन ने कबीर को अपने युग का 'प्रोटेस्टेंट' सुधारक तक कह दिया है। कबीर दास जी ने भक्ति के बिना योग, व्रत, पूजा सभी को व्यर्थ माना है। उन्होंने उन पर इस तरह व्यंग्य से चोट किया है–

''कोई फेरै माला कोई फेरै तसबी,
देखौ रे लोगा दोनो कसबी।
कोई जावै मक्का कोई जावै कासी,
दोऊ कै गलि परि गई पासी।।''[6]

'सबद' का कबीर वाड्.मय में साखी और रमैनी की तुलना में विशिष्ट महत्व है जिन विषयों को कबीर ने साखी या रमैनी में स्पर्श किया है, वहीं विषय इसमें भी है, किन्तु इसमें उन्हें अधिक विस्तार मिला है। सत्य उनका आधार तत्व है और व्यंग्य उनका पैना अस्त्र। बात धर्म की हो या समाज की, प्रेम की हो या भक्ति की, ज्ञान की हो या योग की करते हैं। सत्य को सत्यापित करना उनके व्यंग्य की विशेषता है।

उनके व्यंग्य इस प्रकरण में सामाजिक भी है, सांस्कृतिक भी है और राजनैतिक भी अर्थात् उन्होंने अपना उपदेश समाज के सभी क्षेत्रों को दिया है। कबीर दास जी की इन्हीं विशेषताओं के कारण उसे समाज सुधारक तक कह दिया जाता है। कवि की सोच बड़ी स्पष्ट है। इसलिए उसके द्वारा प्रयोग किए गए व्यंग्य भी सार्थक और प्रासंगिक है।

संदर्भ सूची :–

1. सिंह, डॉ. जयदेव एवं डॉ. वासुदेव (सं.)– कबीर वाड्.मय (सबद), विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी।
2. सिंह, श्रीमती प्रतिमा– कबीर वाड्.मय में व्यंग्य का स्वरूप, विश्वविद्यालय प्रकाशन, सागर।
3. चतुर्वेदी, परशु राम – कबीर साहित्य की परख, भारती भण्डार, प्रयाग।
4. तिवारी, डॉ. रामचन्द्र– कबीर मीमांसा, लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद।
5. द्विवेदी, हजारी प्रसाद – कबीर, हिन्दी ग्रंथ रत्नाकर, बंबई।
6. जैन, कांति कुमार– कबीर दास, किताब घर प्रकाशन, ग्वालियर।